हिजरत

लेखक :
अ़ब्दुल अ़ज़ीज़ बिन स़ालेह

हिन्दी तर्जुमा-इज़ाफ़ा व एडीटिंग :
सलीम ख़िलजी

Scanned by CamScanner

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

हिजरत

लेखक :

अब्दुल अज़ीज़ बिन स़ालेह

हिन्दी तर्जुमा-इज़ाफ़ा व एडीटिंग :

सलीम ख़िलजी

आदर्श मुस्लिम पब्लिकेशन

30 स्टेडियम शॉपिंग सेण्टर जोधपुर-6

99285-92786, 98293-46786, 98876-48000

website : publication.adarshmuslim.com

Scanned by CamScanner

© सर्वाधिकार प्रकाशनाधीन सुरक्षित.

नाम किताब : हिजरत

लेखक	: सलीम ख़िलजी
पृष्ठ संख्या	: 32
प्रथम संस्करण	: 15 अगस्त 2012 (27 रमज़ान 1433 हिजरी)
ता'दाद	: 2100
क़ीमत	: 25 रुपये
लेज़र टाइपसेटिंग	: ख़लीज मीडिया जोधपुर (98293-46786)
प्रिण्टिंग	: आदर्श ऑफ़सेट, स्टेडियम शॉपिंग सेण्टर जोधपुर

प्रकाशक : आदर्श मुस्लिम पब्लिकेशन,

30 स्टेडियम शॉपिंग सेण्टर, जोधपुर–6

मोबाइल नं. : 99285-92786, 98876-48000

website : publication.adarshmuslim.com

e-mail : contact@adarshmuslim.com, adarshmuslim@gmail.com

–: मिलने के पते :–

अल हसनात बुक्स प्रा. लि.
3004/2 सर सैयद अह्मद रोड,
दरियागंज, नई दिल्ली-2
(फ़ोन : 011-23271845)

ख़लीज मीडिया
(मार्केटिंग डिवीज़न)
हज हाउस के सामने, 30 स्टेडियम शॉपिंग सेण्टर, जोधपुर-6 (98293-46786)

Hijrat (A book about islamic concepts) Version 2012
Written by : Saleem Khilji

Scanned by CamScanner

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

विषय-सूची

क्र.सं.	विवरण	पेज नं
01.	पेश लफ़्ज़	04
02.	दार किसे कहते हैं?	05
03.	दार की क़िस्में	07
04.	इलाक़ों का नामकरण	10
05.	हिजरत की ता'रीफ़ (परिभाषा)	12
06.	हिजरत के मक़ासिद (उद्देश्य)	15
07.	दारुल कुफ़्र से दारुस्सलाम की तरफ़ हिजरत का हुक्म	17
08.	मुहाजिर के चार हालात और उनका हुक्म	22
09.	मिश्रित संस्कृति वाले देशों से हिजरत	26
10.	हिजरत के बुनियादी उसूल	29
11.	निष्कर्ष (Conclusion)	32

Scanned by CamScanner

पेश-लफ़्ज़

हिजरत की इस्लाम में बहुत ज़्यादा अहमियत है। जिस इलाक़े में मुसलमानों का, मुस्लिम पहचान के साथ जीना मुश्किल हो, जहाँ उसके ईमान को चोट पहुँचाई जाती हो, जहाँ उसके दीनी फ़रीजे पूरी आज़ादी के साथ अदा न हो सकते हों, जहाँ दूसरी क़ौमों के लोग उनके साथ अछूतों जैसा बर्ताव करते हों तो फिर ऐसी ह़ालत में उस इलाक़े के मुसलमानों की ज़िम्मेदारी है कि वो ऐसे इलाक़े में चले जाएं जहाँ वे अपने ईमान पर मज़बूती से क़ायम रह सकें।

आज दुनिया भर में साम्प्रदायिक सद्भाव तार-तार हो चुका है। एक सोची-समझी साज़िश के तहत हर जगह बहुसंख्यक ग़ैर-मुस्लिमों के दिमाग़ में मुसलमानों के प्रति नफ़रत और दुर्भावना भर दी गई है। जहाँ कहीं भी दंगा होता है उसके बाद मुसलमानों के साथ सामाजिक बहिष्कार का सिलसिला शुरू हो जाता है। वोट खोने के डर से सरकारें भी तमाशा देखती रहती हैं। ऐसे ह़ालात में मुसलमान क्या करें?

इस्लाम अपने मानने वालों को घुट-घुटकर जीने की इजाज़त नहीं देता। अगर किसी जगह पर मुसलमानों का ईमान मह़फ़ूज़ न हो, जहाँ उसकी जान, माल व इज़्ज़त-आबरू ख़तरे में हो तो उस सूरत में हिजरत करना मुसलमानों पर वाजिब हो जाता है। ज़ुल्म सहन करते हुए जीना या अपनी मोमिनाना पहचान गंवाकर जीना सच्चे मुसलमान की शान नहीं है।

जो लोग ईमानवाले होने का दा'वा करते हैं और अगर उनको किसी इलाक़े में मुसलमान होने की वजह से सताया जाता है और वे अपने माल-दौलत, कारोबार या आलीशान घर के लालच में उस इलाक़े से हिजरत नहीं करते हैं तो गोया उनके ईमान में खोट है।

अल्लाह तआला ने इन्सान को सिर्फ़ कमाने-खाने और आलीशान इमारतें बनाने के लिये पैदा नहीं किया है। बहुत से मुसलमान ऐसे हैं जो दुनियवी लालच में ज़ुल्म सहकर जी रहे हैं। उन्हें यह बात याद रखनी चाहिये कि माल-दौलत से ज़्यादा ईमान की ह़िफ़ाज़त ज़रूरी है। हिजरत करना अल्लाह के रसूल (ﷺ) की सुन्नत है। इस किताब में हिजरत के तमाम पहलुओं पर चर्चा की गई है। हमें उम्मीद है कि यह किताब हिजरत जैसे अहम मुद्दे पर पाठकों की रहनुमाई करेगी, इंशाअल्लाह!

Scanned by CamScanner

दार किसे कहते हैं?

'दार' लफ़्ज़ फ़ारसी भाषा का भी है और यह अ़रबी भाषा का भी एक लफ़्ज़ है। फ़ारसी में दार का मत़लब सूली या फाँसी होता है। लेकिन अ़रबी भाषा में दार के दो मा'नी बताए गये हैं,

01. **ख़ास :** फुक़हा (धर्मशास्त्रियों) ने यह बताया है कि 'दार' ज़मीन के एक ऐसे ह़िस़्स़े को कहते हैं जिसकी सीमाएं तय की गई हों। इसमें छत वाले घर और बग़ैर छत वाले सहन (आँगन) हों। सहन में लोग सुकून और ठण्डक के लिये रहते हों और छत वाले ह़िस़्स़े में भी लोग जाते हों।

(दुर्रुल मुख़्तार अ़ला अद्दुर्रुल मुख़्तार)

02. **आ़म :** या'नी एक ऐसी जगह जिसमें इमारत हो और बग़ैर दीवारों वाली ख़ाली जगह सहन भी हो। एक शहर को भी दार कहा जा सकता है।

दूसरी परिभाषा के बारे में क़ुर्आन मजीद की आयतें है,

'फ़जासू ख़िलालद्दियारि व कान वअ़दम्मफ़ऊला' (तर्जुमा) **'वो शहर के अन्दर घुसकर दूर तक फैल गये और ये वा'दा था पूरा होने वाला।'** (बनी इस्राईल : 5)

'अलम त-र अलल्लज़ीन ख़रजू मिन दियारिकुम' (तर्जुमा) **'क्या आपने उन लोगों को देखा नहीं जो अपने-अपने घरों से निकले?'**

(अल बक़र : 243)

इन आयतों से मा'लूम होता है कि दार से मुराद (तात्पर्य) शहर, बस्ती वग़ैरह सभी हैं; या'नी एक ऐसा इलाक़ा जिसमें इन्सान इकट्ठे होकर रहते हों और आपसी मामलात और विवाद वग़ैरह भी निपटाते हों, इसके लिये वहाँ का निज़ाम (शासन-व्यवस्था) चाहे शरई हो या ग़ैर-शरई हो।

Scanned by CamScanner

दार से तात्पर्य देश भी हो सकता है जिसमें बहुत सारे राज्य और शहर हों। मौजूदा दौर में दार का मा'नी व मफ़हूम (भावार्थ) यही है। देश या रियासत में जितने भी सूबे (राज्य) हों उन सबकी सीमाएं तयशुदा हों। उनके बाशिन्दों (निवासियों) के अधिकार निर्धारित हों। इस रियासत का कोई हाकिम (शासक) भी हो जो पूरी रियासत का शासन चलाता हो। इसी को रियासत या **'अहकामुस्सुल्तानिया'** कहते हैं। तमाम रियासतें जनता की भलाई के लिये काम करती हैं। ख़ुलास-ए-कलाम (सारांश) यह है कि रियासत के लिये चार चीज़ें होनी ज़रूरी हैं,

(1). इलाक़ा (2). अ़वाम या'नी जनता
(3). निज़ाम (शासन व्यवस्था) (4). दिफ़ाअ़ (सुरक्षा-व्यवस्था)

अगर रियासत इस्लामी हो तो उसके लिये यूँ कहा जाएगा,

'एक ऐसी शासन व्यवस्था जिसमें इमारत व ख़िलाफ़त (नेतृत्व) इस्लामी उ़सूल के तहत क़ायम किया गया हो। जिसमें राज-काज चलाने के लिये रहनुमाई अल्लाह की किताब क़ुर्आन और अल्लाह के रसूल (ﷺ) की सीरत से हासिल की जाए।'

इमाम इब्ने तैमिया (रह़.) अपनी किताब, **'अस्सियासतुश्शरिअः'** में लिखते हैं, 'रियासतों का मक़सद अ़वाम के दीन (या'नी दीनी मामलात) की इस्लाह होना चाहिये। अगर दीन नहीं होगा तो अ़वाम नुक़्सान व ख़सारे (घाटे) में रहेगी और दुनिया की ख़ुशहाली उन्हें कोई फ़ायदा नहीं दे सकेगी। इसके साथ-साथ अ़वाम के दुनियवी कामों का भी सुधार करना है।'

इस्लामी रियासत में अमीर या ख़लीफ़ा मुक़र्रर करने का मक़सद सिर्फ़ इतना होता है कि वो ह़ज़रत मुह़म्मद (ﷺ) की लाई हुई शरीअ़त का अमीन (निगरां) होता है। वो दुनियवी सियासत के साथ-साथ दीनी कामों की ह़िफ़ाज़त भी करता है। उसमें भी अस़ल मक़सद दीन है, न कि सिर्फ़ दुनिया।

*****

Scanned by CamScanner

दार की क़िस्में

01. दारुस्सलाम :

'ज़मीन का हर वो हिस्सा और इलाक़ा, जहाँ इस्लामी अहकाम व क़ानून ग़ालिब (हावी) हों; दारुस्सलाम कहलाता है।'

* कुछ लोगों ने दारुस्सलाम की परिभाषा में यूँ भी कहा है कि 'दारुस्सलाम वो है जिसमें कोई कुफ़्रिया ख़सलत (अवगुण) न हो।'

* कुछ लोगों ने दारुस्सलाम के बारे में यह कहा है, 'जिस इलाक़े में इस्लाम की दा'वत उस इलाक़े के लोगों में से ही उठी हो; न वो ज़िम्मी हों, न ज़ज़्या देकर रहने वाले हों; न मुसलमानों के साथ किसी अहद (समझौते) की वजह से इस्लाम की दा'वत उठी हो। अगर वहाँ ज़िम्मी आबाद भी हों तो उन पर अहले इस्लाम के अहकाम नाफ़िज़ हों और अहले सुन्नत, अहले बिदअत पर ग़ालिब (हावी) हों या'नी जहाँ अहले सुन्नत बहुसंख्यक और अहले बिदअत अल्पसंख्यक हों।

* दारुस्सलाम के बारे में यह भी कहा गया है, 'जिस इलाक़े में मुसलमान आबाद हों या जिस हिस्से इस्लामी अहकाम ग़ालिब हों, वो दारुस्सलाम है; अगरचे वहाँ मुसलमानों के साथ-साथ दीगर मज़हब के मानने वाले लोग भी रहते हों।'

ख़ुलासा यह है कि दारुस्सलाम उन देशों को कहा जाएगा जिनमें अनेक राज्य व शहर हों और वो सब मुसलमानों के शरई अहकाम के मातहत (अधीन) हों। जनता चाहे सिर्फ़ मुसलमान हो या मुसलमानों के साथ-साथ ग़ैर-मुस्लिम भी हों, लेकिन हुक्मरानी इस्लाम के ग़लबे (प्रभुत्व) के साथ हो। जिस इलाक़े में मुसलमान ईमान की हालत में रहते हों, आपराधिक व दीगर मामलात, विवाद और मतभेद इस्लामी क़ानून के तहत निपटाए जाते हों, उसे दारुस्सलाम कहते हैं।

Scanned by CamScanner

02. दारुल कुफ़्र :

हर वो इलाक़ा या ज़मीन का टुकड़ा, जहाँ कुफ़्र के अहकाम व क़ानून ग़ालिब हों और उस इलाक़े के बाशिन्दों की मुसलमानों के साथ जंग न हो रही हो, दारुल कुफ़्र कहलाता है। इनमें वो देश भी शामिल हैं जिनमें पहले मुसलमानों के साथ जंग हुई हो, मगर अब ह़ालात अमन-चैन के हों।

03. दारुल मुरक्कबः :

इसमें दारुस्सलाम व दारुल कुफ़्र दोनों की ख़ुसूसियात का मुरक्कब (मिश्रण) होता है। न तो यह दारुस्सलाम है जहाँ इस्लामी क़ानून नाफ़िज़ है और न ही यह दारुल ह़रब है जिसमें मुसलमानों के साथ जंग की जाती हो और उन्हें दीन पर चलने से रोका जाता हो। दारुल मुरक्कबः वो इलाक़ा है जहाँ मुसलमानों के साथ उनकी ह़ैसियत के मुताबिक़ सुलूक किया जाता है।

शैख़ुल इस्लाम इब्ने तैमिया (रह़.) ने अपने फ़तावा में इसका ज़िक्र किया है। (फ़तावा अल कुबरा, जिल्द : 4 पेज नं. 331 व फ़तावा जिल्द 28 पेज नं. 142)

04. दारुल ह़रब :

हर वो इलाक़ा दारुल ह़रब (शत्रु भूमि) है जिसमें मुसलमानों के साथ जंग की जाती है या'नी वो इलाक़ा जिसके बाशिन्दे हर समय मुसलमानों से बरसरे-पैकार (युद्धरत) रहते हों।

यहाँ यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि हर **दारुल कुफ़्र, 'दारुल ह़रब'** नहीं है क्योंकि जिस इलाक़े में मुसलमानों के साथ जंग न की जाती हो, उन्हें मुसलमान होने की वजह से घरों से नहीं निकाला जाता हो, वो अगरचे दारुल कुफ़्र भी हो लेकिन दारुल ह़रब (शत्रु भूमि) नहीं है।

05. दारुल अ़हद :

हर वो इलाक़ा जिसकी हुकूमत या जिसके बाशिन्दों ने मुसलमानों के साथ जंग न करने का मुआहिदा (समझौता) कर रखा हो,

Scanned by CamScanner

मुसलमान अपने इलाक़े में अपनी दीनी पहचान के साथ आज़ादी से रहते हों; उसे दारुल अ़हद (समझौते वाला इलाक़ा) कहते हैं। इसे दारुस्सुलह (संधि-क्षेत्र) भी कहते हैं।

06. दारुल बग़ी :

वो इलाक़ा जहाँ मुस्लिम हुक्मरान से नाहक़ बग़ावत करके कुछ मुसलमान जमा हो गये हों और वहाँ उन्होंने ताक़त हासिल कर ली हो, दारुल बग़ी (नाफ़र्मानों का इलाक़ा) कहलाता है। इसे दारुल फ़ासिक़ीन भी कहा जाता है।

ये सारी क़िस्में फ़िक़्ह में बयान की गई हैं। कुछ फ़क़ीहों (धर्मशास्त्रियों) ने दार की तीन क़िस्में तो कुछ ने चार क़िस्में बयान की है। इनके अ़लावा दार की एक और क़िस्म भी बयान की जाती है, वो है दारुल अमन।

07. दारुल अमन :

वो इलाक़ा जहाँ की शासन-व्यवस्था ग़ैर-इस्लामी हो और वहाँ पर मुसलमान अल्पसंख्यक हों; लेकिन उनके साथ पुरअमन (शान्तिपूर्ण) बर्ताव किया जाता हो और उनको दीन के मामले में कोई रूकावट नहीं पहुँचाई जाती हो, दारुल अमन कहलाता है।

*****

Scanned by CamScanner

इलाक़ों का नामकरण

कोई इलाक़ा दारुल कुफ़्र या दारुस्सलाम कैसे बनता है?

ये सिफ़ात किसी देश, शहर या इलाक़े के लिये ख़ास नहीं है बल्कि वहाँ के बाशिन्दों के आ'माल (कामों) के आधार पर कोई इलाक़ा दारुल कुफ़्र बनता है या दारुल ईमान होता है। लोकतांत्रिक देशों में जनता जिस मानसिकता के लोगों को चुनाव में वोट देकर चुनती है उन्हीं की मानसिकता से देश में क़ानून बनते हैं और देश की हुकूमत चलाई जाती है।

जिस इलाक़े के लोग मोमिन व मुत्तक़ी हों, जहाँ हुकूमत अल्लाह के हुक्मों के मुताबिक़ चलाई जाती हो, इस्लामी शरीअत के मुताबिक़ फ़ैसले किये जाते हों, वो आज के ज़माने में भी **'दारुल औलिया अल्लाह'** है। इसी तरह अगर किसी इलाक़े के लोग काफ़िर हों या मुसलमान हों मगर हुकूमत इस्लाम के अलावा किसी और क़ानून के तहत की जा रही हो, फ़ैसले भी इन्सानों के बनाए हुए क़ानूनों से किये जाते हों तो वो इस दौर का **'दारुल कुफ़्र'** है। इसी तरह अगर किसी इलाक़े में फ़ासिक़ (नाफ़र्मान) लोग आबाद हों, जहाँ खुलेआम ऐसे काम किये जा रहे हों जिनको इस्लाम ने हराम क़रार दिया है, तो वो इलाक़ा **'दारुल फ़िस्क़'** होगा।

यह नाम और पहचान स्थायी नहीं है। अगर कोई इलाक़ा दारुल कुफ़्र या दारुल फ़िस्क़ है और वहाँ के बाशिन्दे नेक व दीनदार बन जाएं, हुकूमत इस्लामी शरीअत के मुताबिक़ चलाई जाने लगे लगे तो वो इलाक़े दारुस्सलाम कहलाए जाने लगेंगे और उनकी पुरानी पहचान ख़त्म हो जाएगी। इसी तरह अगर कोई शहर दारुस्सलाम था और अल्लाह न करे किसी कारण से ग़ैर-इस्लामी रविश को अपना ले तो वो दारुस्सलाम नहीं रहेगा बल्कि दारुल कुफ़्र बन जाएगा।

इसकी मिषाल यह है कि अगर किसी जगह कोई रिहायशी घर था, फैक्टरी

Scanned by CamScanner

थी या नाफ़र्मानी के किसी काम का अड्डा था, अगर उसकी जगह मस्जिद बना दी जाए तो उसकी नोइयत (प्रकृति) बदल जाएगी। इसी तरह अल्लाह न करे अगर किसी मस्जिद पर ग़ैर-मुस्लिम क़ब्ज़ा कर लें और उसे मन्दिर बना दें तो मूर्तियों की मौजूदगी में वहाँ नमाज़ नहीं होगी।

तिर्मिज़ी में एक मर्फ़ूअ ह़दीष़ है कि अल्लाह के रसूल (ﷺ) ने शहरे-मक्का को मुख़ातिब करते हुए फ़र्माया,

'अल्लाह की क़सम! तू अल्लाह की ज़मीन का बेहतरीन हिस़्स़ा है, अल्लाह को पसन्द है; अगर मेरी क़ौम न निकालती तो मैं कभी न निकलता।'

नबी करीम (ﷺ) ने बता दिया कि मक्का तमाम शहरों में सबसे बेहतरीन शहर है, इसके बावजूद आप (ﷺ) ने दीन के मामले में सताए जाने के कारण इस शहर से हिजरत की। लिहाज़ा तमाम मुसलमानों के लिये यह एक अहमतरीन उस़ूल है कि वो यह नहीं कह सकता कि मैं जिस शहर या जिस इलाक़े में रहता हूँ वो सबसे बेहतरीन जगह है, मैं उसे छोड़कर कमतर जगह की ओर कैसे जाऊँ? इस्लाम की नज़र में बेहतरीन जगह वो है जहाँ मुसलमानों का दीन व ईमान मह़फ़ूज़ (सुरक्षित) है। जहाँ उसके बीवी-बच्चों की इ़ज़्ज़त-आबरू सुरक्षित है।

अगर कोई इन्सान किसी शहर के पॉश इलाक़े में रहता हो लेकिन वहाँ का माहौल इस्लामी न हो, ईदुल अज़हा को क़ुर्बानी करने में तकलीफ़ पेश आती हो; अमीरी की बहुतायत के कारण शराबख़ोरी, ज़िना और नंगेपन जैसे गुनाह वाले काम होते हों, तो उसके मुक़ाबले वो लॉअर बस्तियाँ बेहतर है जहाँ की ज़्यादातर आबादी मुसलमान है, जहाँ मस्जिदें और मदरसे हैं। वातावरण में अज़ानों की आवाज़ें गूँजती है और बच्चे क़ुर्आन-ह़दीष़ की ता'लीम ह़ास़िल करते हैं। इस्लाम की नज़र में वो पॉश कॉलोनी 'दारुल कुफ़्र' है और लॉअर बस्ती 'दारुस्सलाम' है।

लिहाज़ा मुसलमानों की ज़िम्मेदारी है कि वो जिन इलाक़ों में रहें उनको दारुस्सलाम बनाने की कोशिश करें। अगर किसी इलाक़े में ईमान की ह़ालत में रहना मुश्किल हो तो फिर अमन वाली जगह की तरफ़ हिजरत करें।

*****

Scanned by CamScanner

हिजरत की ता'रीफ़ (परिभाषा)

हिजरत का शाब्दिक अर्थ :

हिजरत अ़रबी भाषा का लफ़्ज़ है। हिजरत का मत़लब है किसी ख़ास़ वजह से एक जगह छोड़कर दूसरी जगह चले जाना। अल्लाह के रसूल (ﷺ) ने इर्शाद फ़र्माया,

'अ़मल निय्यत ही से स़हीह होते हैं (या निय्यत ही के मुत़ाबिक़ उनका बदला मिलता है) और हर आदमी को वही मिलेगा जो निय्यत करेगा। बस जो कोई अल्लाह और उसके रसूल की रज़ा के लिये हिजरत करे उसकी हिजरत अल्लाह और उसके रसूल (ﷺ) की त़रफ़ होगी और जो कोई दुनिया कमाने के लिये या किसी से शादी करने के लिये हिजरत करेगा तो उसकी हिजरत उन्हीं कामों के लिये होगी।' (स़ह़ीह़ बुख़ारी, स़ह़ीह़ मुस्लिम)

अ़रबी भाषा की मशहूर डिक्शनरी **'लिसानुन अ़रब'** और **'ताजुल उ़रूस'** में लफ़्ज़ **'हिजरत'** के बारे में लिखा है कि यह लफ़्ज़ **'वस्ल'** का विलोम है। **वस्ल का मा'नी है, मिलना और हिजरत का मा'नी है, जुदाई।**

हिजरत का शरई़ मा'नी :

इस्लामी शरीअ़त के मुत़ाबिक़ हिजरत का मत़लब है,

01. **'दारुल हरब से निकलकर दारुस्सलाम में जाना।'**
02. **अल्लाह और उसके रसूल (ﷺ) की इत़ाअ़त के लिये या उनके हुक्म की फ़र्माबरदारी करते हुए एक जगह से दूसरी जगह चले जाना।**

शैख़ इब्नुल अ़रबी (रह़.) ने **'अहकामुल क़ुर्आन'** में, इब्ने क़ुदामा ने

Scanned by CamScanner

'**अल मुग़नी**' में और शैख़ सअ़द बिन अ़तीक़ (रह़.) ने '**अद् दारुस्सुन्नः**' में हिजरत की आ़म-फ़हम (सीधी-सरल) परिभाषा देते हुए लिखा है,

> **'हिजरत का मा'नी है शिर्क और मआ़सी (नाफ़र्मानी) की जगहों से निकलकर इस्लाम व इताअ़त के इलाक़े की त़रफ़ मुन्तक़िल (ट्रांसफ़र, स्थानान्तरित) होना।'**

दूसरे शब्दों में यूँ कहा जा सकता कि अगर किसी गाँव, कस्बे, मुहल्ले, शहर, राज्य या देश में किसी मुसलमान के लिये ईमान की हालत में रहना मुमकिन न हो; उसे मुसलमान होने की वजह से सताया जाता हो; उसे इस्लाम के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारने से रोका जाता हो, जहाँ उसकी जान-माल व इ़ज़्ज़त ख़त़रे में हो और उस शख़्स़ में इतनी त़ाक़त न हो कि उसका प्रतिरोध कर सके तो उस शख़्स़ को वो जगह छोड़कर ऐसी जगह पर चले जाना चाहिये जहाँ पहले से ही मुसलमान आबाद हों और जहाँ जाने पर उसका ईमान और उसकी जान, माल व इ़ज़्ज़त मह़फ़ूज़ (सुरक्षित) हो जाए।

> **अपना ईमान और अपनी मुस्लिम पहचान बचाने के लिये हिजरत करना हर मुसलमान मर्द व औ़रत के लिये फ़र्ज़ है, सिवाय उन लोगों के लिये जो मजबूर व बेबस हों।**

बहुत से लोग हिन्दी भाषा में '**हिजरत**' लफ़्ज़ के अनुवाद के त़ौर पर '**पलायन**' शब्द का उपयोग करते हैं, जो कि स़ह़ीह़ नहीं है। पलायन का मत़लब होता है, भाग जाना या बिना किसी कारण के एक जगह छोड़कर दूसरी जगह चले जाना। इसलिये बेहतर यही है कि हिजरत शब्द को उसके ऑरिजनल रूप में ही उपयोग किया जाए।

मुहाजिर कौन है?

इस्लामी इतिहास में मुहाजिरीन उन मुसलमानों को कहा जाता है जिन्होंने अल्लाह के रसूल (ﷺ) के हुक्म की पैरवी करते हुए मक्का को छोड़कर दूसरी जगह रहना मंज़ूर किया। पहली हिजरत मक्का से ह़ब्शा (वर्तमान इथोपिया अफ़्रीक़ा) की ओर हुई थी और दूसरी हिजरत मक्का मदीना की ओर।

अज़हरी कहते हैं कि अ़रब में आ़म त़ौर पर मुहाजिर ऐसे देहाती को कहा जाता था जो गाँव छोड़कर शहर की ओर चला जाता था। इसी त़रह़ हर उस शख़्स़

Scanned by CamScanner

को मुहाजिर कहते हैं जो अपना घर ख़ाली करके, अपना इलाक़ा छोड़कर दूसरी किसी जगह पर जाकर बस जाए। अगर कोई शख़्स अल्लाह के दीन के लिये घर-बार छोड़े तो उसे '**मुहाजिर फ़िल इस्लाम**' कहा जाएगा, उसके लिये अल्लाह तआला ने ज़मीन में फैलाव और बख़्शिश का वा'दा किया है।

'जिसने अल्लाह की राह में हिजरत की वो ज़मीन में बहुत फैलाव पाएगा और जो शख़्स अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ हिजरत करते हुए घर से निकला और रास्ते में उसे मौत आ गई तो उसका अज्र अल्लाह पर षाबित हो गया और अल्लाह बख़्शने वाला रहम करने वाला है।' (सूरह निसा : 100)

'अल्लाह ने मोमिनों के जान और माल ख़रीद लिये हैं जन्नत के बदले में।' (सूरह तौबा : 111)

जो लोग अपने इलाक़ों या अपने गाँवों में रहे और नबी करीम (ﷺ) के साथ हिजरत नहीं की उन्हें **मुहाजिर** के बजाय **आ'राब** कहा गया। इब्ने अषीर (रह.) कहते हैं कि हिजरत की दो क़िस्में हैं,

पहली क़िस्म उन लोगों की है जो लोग ईमान लाए और हिजरत करके आप (ﷺ) के पास जाकर रहने लगे। उन्हें इस हिजरत के बाद वापस अपने शहर जाकर बसना बेहद तकलीफ़देह मा'लूम होता था। फ़तहे मक्का के बाद आप (ﷺ) ने दुआ की थी, '**अल्लाहुम्म ला तजअल मनाया बिहा**' (तर्जुमा) '**ऐ अल्लाह हमें उस जगह (मक्का में) मौत न दे।**' मक्का फ़तह हो जाने के बाद जब वो भी मदीना की तरह दारुस्सलाम बन गया तो मक्का से हिजरत करने का हुक्म ख़त्म हो गया।

दूसरी क़िस्म उन लोगों की है जो ईमान लाने के बाद अपने इलाक़ों ही में बसे रहे हालांकि उन लोगों ने मुसलमानों के साथ मिलकर काफ़िरों से जंग भी की थी। उनकी हिजरत कुफ़्र व शिर्क से ईमान की तरफ़ थी।

*****

Scanned by CamScanner

हिजरत के मक़ासिद (उद्देश्य)

हिजरत के दो मक़सद हैं,

01. फ़ित्नों (दीन के मामले में आज़माइशों) से बचना और ग़ैर-मज़हबी (अधार्मिक) व काफ़िर लोगों की तहज़ीब (संस्कृति) के रंग में रंगे जाने से महफ़ूज़ (सुरक्षित) रहना।

आम तौर पर यह देखा जाता है कि आदमी जिन लोगों के बीच रहता है और हर वक़्त उठता-बैठता है, वो उनकी आदतें, अख़लाक़, तहज़ीब व तमद्दुन (सभ्यता व संस्कृति) अपना लेता है। उसे इस्लाम के मुताबिक़ चलना उसे मुश्किल लगने लगता है और **बहुत से लोग तो नई तहज़ीब के रंग में रंगीले होकर इस्लाम को दकियानूस और बैकवर्ड समझने लगते हैं। ऐसे कई परिवार आज मुस्लिम समाज में हैं जिनके बच्चों ने तथाकथित शाकाहारी लोगों की संगत में रहकर गोश्त खाना छोड़ दिया और वो ईदुल अज़हा के दिन भी सब्ज़ी पकाकर खाते हैं।** ऐसे भी कई लोग हैं जो क़ुर्बानी करने के बजाय मदरसे में **'रसीद'** कटवाकर अपने फ़र्ज़ को पूरा हुआ समझ लेते हैं। ग़ैर-मुस्लिमों की बहुलता वाले इलाक़ों में रहने वाले लोगों का परिवार इस्लाम के मुताबिक जीने में ख़ुद को कमज़ोर पाता है, लिहाज़ा बेहतर यही है कि हिजरत की जाए।

02. अल्लाह के दीन पर मज़बूती से अमल करना। एक क़ौम बनकर रहना। अहले इस्लाम के क़रीब रहना, दीन की दा'वत के लिये यक्सू (एकाग्र) होना जिसका हुक्म अल्लाह ने हमें दिया है कि लोगों तक अल्लाह का दीन पहुँचा दें। अल्लाह के दीन की मदद करना और उसके दुश्मनों को हर मुमकिन तौर पर जवाब देना।

मुसलमानों के बीच रहकर इस्लाम की ता'लीमात पर अमल करना आसान

Scanned by CamScanner

होता है। पाँचों वक़्त मस्जिद में अज़ान, जमाअत के साथ नमाज़, बलन्द आवाज़ में कुर्आन की तिलावत, कुर्आन-ह़दीष़ का इज्तिमाई (सामूहिक) दर्स, रमज़ान में रातों को जागना, ख़ुशनुमा त़रीक़े से ईद मनाना, ईदुल अज़्हा के दिनों में बिला हिचक क़ुर्बानी करना, ये सब ऐसे काम हैं जो मुस्लिम बहुल इलाक़ों में रहकर ही किये जा सकते हैं।

इसके अलावा मुस्लिम बहुल इलाक़ों में रहने की वजह से आज के दौर की तथाकथित आधुनिकता, मुस्लिम औरतों के लिये दुपट्टा ओढ़ने और बुर्क़ा व नक़ाब पहनकर बाहर निकलने में रूकावट नहीं बनती। यह बात पूरी त़रह़ सच है कि मुस्लिम बहुल इलाक़ों में रहकर ही मुस्लिम औरतें 'स्कर्ट-बिकिनी कल्चर' और नंगेपन से बच सकती हैं।

एक साथ रहने से मुसलमानों के लिये एक-दूसरे की मदद करना आसान होता है। देश के किसी ह़िस्से अगर मुसलमानों के साथ अगर कोई ज़ुल्म-ज़्यादती होती है तो उस पर इज्तिमाई त़ौर पर ए'तिराज़ जताना, मज़लूम मुसलमानों के ह़क़ में इज्तिमाई दुआ करना और मज़लूम मुसलमानों की मदद के लिये रुपया-पैसा इकट्ठा करना भी मुमकिन होता है।

एक क़ौम बनकर एक साथ रहने से मुसलमानों में कमतरी (हीनता) का एहसास नहीं होता। मर्दों के घरों से बाहर होने पर भी औरतें ख़ुद को असुरक्षित महसूस नहीं करतीं। औरतों के लिये ख़ाली वक़्त गुज़ारना आसान होता है, इस दौरान दीन की समझ रखने वाली औरतें, दूसरी औरतों को इस्लाम के बारे में बड़ी आसानी से जानकारी दे सकती हैं। औरतों को अगर कोई मसला पेश आ जाए तो क़रीब की मस्जिद से उन्हें स़ह़ीह़ रहनुमाई मिल जाती है।

ये सब काम मुसलमानों के एकजुट होकर रहने से ही पूरे हो सकते हैं और इसके लिये हिजरत की बड़ी अहमियत है।

*****

Scanned by CamScanner

दारुल कुफ़्र से दारुस्सलाम की तरफ़

हिजरत का हुक्म

इस बारे में उलमा के बीच मतभेद है कि क्या हिजरत अब भी बाक़ी है या मन्सूख़ (निरस्त) हो गई है? इस बारे में उलमा की दो राय है।

पहली राय : अब हिजरत बाक़ी नहीं

कुछ उलमा का यह मानना है कि हिजरत का हुक्म फ़तहे-मक्का से पहले तक था और अब हिजरत बाक़ी नहीं है। अबू बक्र जस्सास अपनी किताब 'अहकामुल क़ुर्आन' में सूरह निसा की आयत नं. 89 का ज़िक्र करते हुए लिखते हैं,

'इनमें से किसी को दोस्त न बनाओ जब तक कि अल्लाह की राह में हिजरत न कर लें।' (सूरह निसा : 89)

या'नी जब तक मुसलमान न हो जाएं, इसलिये कि हिजरत इस्लाम लाने के बाद होती है और अगर इस्लाम भी ले आएं तो उनकी दोस्ती तुम्हारे साथ हिजरत करने के बाद ही हो सकती है। जैसा कि फ़र्माने बारी तआला है,

'तुम्हारा और उनका दोस्ती से क्या वास्ता, जब तक कि हिजरत न कर लें?' (सूरह अन्फ़ाल : 72)

यहाँ उस सूरत की बात हो रही है जब हिजरत फ़र्ज़ हो। इसी तरह नबी करीम (ﷺ) का फ़र्मान है,

'मैं हर उस मुसलमान से बरी हूँ जो मुश्रिकीन में रहता हो और उस मुसलमान से बरी हूँ जो मुश्रिकीन के साथ रहता हो।' सवाल किया गया, 'क्यों ऐ अल्लाह के रसूल (ﷺ)?' आप (ﷺ) ने फ़र्माया,

Scanned by CamScanner

'दोनों एक जगह जमा नहीं हो सकते (या'नी मुस्लिम और मुश्रिक को एक जगह नहीं रहना चाहिये।' (तिर्मिज़ी : 4/155 स़ह़ीह़)

फ़तहे-मक्का तक हिजरत फ़र्ज़ थी, उसके बाद मन्सूख़ हो गई है। ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि.) से रिवायत है कि फ़तहे-मक्का वाले दिन आप (ﷺ) फ़र्माया,

'अब हिजरत नहीं है, जिहाद और उसकी निय्यत है। जब तुम्हें (जिहाद में) जाने के लिये कहा जाए तो तुम चल पड़ो।' (बुख़ारी, मुस्लिम)

ह़ज़रत अबू सईद ख़ुदरी (रज़ि.) से रिवायत है कि एक आ'राबी ने नबी करीम (ﷺ) से हिजरत के बारे में सवाल किया तो आप (ﷺ) ने फ़र्माया,

'हिजरत बहुत मुश्किल काम है। क्या तुम्हारे पास ऊँट हैं?' उसने कहा, 'हाँ!' आप (ﷺ) ने पूछा, 'क्या तुम उसकी ज़कात देते हो?' उसने कहा, 'हाँ!' आप (ﷺ) ने फ़र्माया, 'नदी के पार (जहाँ तुम रहते हो) अ़मल करते रहो, अल्लाह तुम्हारे अ़मल में से कुछ कम नहीं करेगा।'

इस ह़दीष़ से ष़ाबित होता है कि आप (ﷺ) ने उस आदमी के लिये यह जाइज़ क़रार दिया कि वो हिजरत करने का इरादा छोड़ दे। ह़ज़रत आ़मिर (रज़ि.) से रिवायत है, वो कहते हैं कि एक शख़्स ने इब्ने अ़म्र (रज़ि.) के पास आकर कहा, मुझे आप ऐसी कोई बात बताएं जो आपने नबी करीम (ﷺ) से सुनी हो। इब्ने अ़म्र (रज़ि.) ने कहा, मैंने नबी करीम (ﷺ) को यह फ़र्माते हुए सुना,

'मुसलमान वो है जिसकी ज़बान व हाथ से मुसलमान मह़फ़ूज़ रहें और मुहाजिर वो है जो अल्लाह की मना की हुई चीज़ों से रुक जाए।'
(स़ह़ीह़ बुख़ारी 6003)

इब्ने आ़बिदीन रद्दुल मुह़्तार अ़ला दुर्रुल मुख़्तार में फ़र्माते हैं कि उ़ताबी का क़ौल है, **'जिसने इस्लाम क़ुबूल किया और हमारी त़रफ़ हिजरत नहीं की तो वो हमारे रहने की जगह पर अस़्ली मुसलमान का वारिष़ नहीं बन सकता और न ही अस़्ली मुसलमान उसका वारिष़ बनेगा, चाहे वो मुसलमान दारुल ह़रब में हो या न हो।'**

उ़ताबी का ये क़ौल ग़ालिबन उस दौर के बारे में है जबकि हिजरत फ़र्ज़ थी। जैसा कि अल्लाह तआ़ला ने हिजरत करने वालों और हिजरत नहीं करने वालों के

Scanned by CamScanner

बीच दोस्ती को मना फ़र्माया है।

'जो लोग ईमान लाए और हिजरत नहीं की, तुम्हारा उनसे दोस्ती का कोई ता'ल्लुक़ नहीं जब तक कि वो हिजरत न कर लें।'

(सूरह अन्फ़ाल : 72)

जब उनके साथ दोस्ती करना भी मना था तो मीराष़ भी मना थी क्योंकि मीराष़ का बुनियादी ता'ल्लुक़ दोस्ती पर है। अब ऐसा नहीं है, दोनों क़िस्म के मुसलमान एक-दूसरे के वारिष़ बन सकते हैं; इसलिये कि नबी करीम (ﷺ) ने इर्शाद फ़र्माया,

'हिजरत ख़त्म हो चुकी है, अब जिहाद और उसकी निय्यत है।'
(स़ह़ीह़ मुस्लिम किताबुल जिहाद वस्सीर : 1356, 1357, 1358, 1731)

एक और रिवायत में है कि जब स़फ़वान बिन उमैया मुसलमान हुआ तो उनसे किसी ने कहा कि जिसने हिजरत नहीं की उसका दीन नहीं है; तो वो नबी करीम (ﷺ) के पास आए। आप (ﷺ) ने पूछा, 'ऐ अबू वहब! क्यों आए हो?' उसने कहा कि मुझे किसी ने कहा है कि हिजरत के बग़ैर दीन नहीं है। आप (ﷺ) ने फ़र्माया,

'अबू वहब! मक्का के मैदानों में वापस जाओ और वहाँ के बाशिन्दों से कहो कि अपने घरों में रहो, अब हिजरत ख़त्म हो चुकी है अलबत्ता जिहाद और उसकी निय्यत बाक़ी है।'

दूसरी राय : हिजरत क़यामत तक बाक़ी रहेगी

ज़्यादातर उ़लमा का क़ौल यह है कि पहली राय का ता'ल्लुक़ फ़तहे-मक्का के बाद मक्का से मदीना की ओर हिजरत के बारे में है। मक्का ख़ुद दारुस्सलाम है इसलिये वहाँ से हिजरत की कोई ज़रूरत नहीं। इसी त़रह अगर कोई शख़्स़ किसी ऐसे इलाक़े में रहता हो जो दारुस्सलाम हो तो उसके लिये हिजरत करना ज़रूरी नहीं है। लेकिन जो शख़्स़ दारुस्सलाम में नहीं रहता हो उसके लिये हिजरत की फ़र्ज़ियत (अनिवार्यता) अब भी बाक़ी है।

इस राय के समर्थकों में इमाम ख़त़्ताबी, इमाम त़ीबी, इमाम नववी, हाफ़िज़ इब्ने हजर, इब्ने क़ुदामा, इब्नुल अ़रबी, इब्ने तैमिया, इब्ने क़य्यिम (शागिर्द इब्ने

Scanned by CamScanner

तैमिया रह़.), शौकानी (रह़िमहुल्लाह अन्हुम) वग़ैरह उ़लमा शामिल हैं। आज के दौर के ज़्यादातर उ़लमा की भी यही राय है।

इब्नुल अ़रबी अपनी किताब 'अहकामुल क़ुर्आन' में फ़र्माते हैं,

'हिजरत का मा'नी दारुल ह़रब से निकलकर दारुस्सलाम में जाना है। ये नबी करीम (ﷺ) के ज़माने में भी फ़र्ज़ थी और अब भी उस शख़्स़ के लिये फ़र्ज़ है (जो दारुल ह़रब में) अपने बारे में अन्देशे का शिकार हो (कि कहीं गुमराही पर मजबूर न किया जाए)। जिन अह़ादीस़ से हिजरत ख़त्म होने का सुबूत मिलता है वो अस़ल हिजरत या'नी आ़म हिजरत का ख़त्म होना है।

त़ीबी (रह़.) कहते हैं, 'इससे मा'लूम होता है कि बाद वाला हुक्म पहले वाले हुक्म को मन्सूख़ कर रहा है; या'नी वो हिजरत जिसने हर शख़्स़ के लिये अपना देश छोड़कर मदीना जाना फ़र्ज़ कर दिया था, वो हिजरत अब ख़त्म हो चुकी है। अलबत्ता जिहाद की वजह से वत़न छोड़ना अब भी बाक़ी है। इसी त़रह़ अच्छी निय्यत और इरादे के आधार पर भी मुल्क छोड़ा जा सकता है; जैसे कि कोई शख़्स़ दारुल कुफ़्र में रहना नहीं चाहता या पढ़ाई के लिये या फ़ित्नों से बचने के लिये देश छोड़ना, इन सब कामों के लिये हिजरत करना जाइज़ है।'

इमाम नववी (रह़.) फ़र्माते हैं, 'हिजरत ख़त्म होने से जो भलाई ख़त्म हो गई थी, वो जिहाद और उसके इरादे से की जा सकती है।'

इमाम इब्ने क़ुदामा (रह़.) अपनी किताब **अल मुग़नी** में हिजरत की मनाही के क़ायल लोगों का ख़याल रद्द करते हुए लिखते हैं कि हमारी दलील ह़ज़रत मुआ़विया (रज़ि.) की रिवायत है जिसमें वो कहते हैं कि नबी करीम (ﷺ) ने इर्शाद फ़र्माया,

'हिजरत उस वक़्त तक ख़त्म न होगी जब तक कि तौबा की मुहलत ख़त्म न हो जाए और तौबा की मुहलत उस वक़्त तक ख़त्म न होगी जब तक कि सूरज पश्चिम से त़ुलूअ़ (उदय) न हो जाए।'

(सुनन अबू दाऊद)

आप (ﷺ) का यह भी फ़र्मान है,

'हिजरत ख़त्म न होगी जब तक जिहाद बाक़ी है।'

(मुस्नद अह़मद : 1/192)

Scanned by CamScanner

इस रिवायत को सईद वग़ैरह ने क़ुर्आनी आयतों और उ़लमा के अक़्वाल के साथ बयान किया है। इस ह़दीष़ से हिजरत का स़ह़ीह़ मत़लब भी वाज़ेह (स्पष्ट) हो जाता है कि हर ज़माने और हर दौर में हिजरत मुमकिन है। जिन अह़ादीष़ में हिजरत के ख़त्म होने और जिहाद के बाक़ी रहने का ज़िक्र है उनका मत़लब ये है कि फ़तहे मक्का के बाद, मक्का या किसी ऐसे शहर हिजरत न की जाए जिसे मुसलमान फ़तह कर लें। आप (ﷺ) ने अबू स़फ़वान (रज़ि.) से जो इर्शाद फ़र्माया था कि **'हिजरत ख़त्म हो चुकी है'** उससे मुराद (तात्पर्य) भी यही है कि दारुस्सलाम बन जाने के कारण मक्का से हिजरत अब ख़त्म हो गई है।

ऐसा इसलिये है कि हिजरत का अस़ल मा'नी ईमान की ह़िफ़ाज़त के लिये काफ़िरों के मुल्क से निकलकर ऐसे मुल्क या इलाक़े में जाना है जहाँ मुसलमान हुकूमत कर रहे हों या जिस जगह पर उनके ईमान पर कोई ख़तरा न हो। ऐसे इलाक़े से फिर उनको हिजरत नहीं करनी चाहिये।

ख़ुलास़ा (सारांश)

हिजरत के बारे में दोनों क़िस्म की रायों को उनकी दलीलों के साथ ऊपर दर्ज किया गया है ताकि समझ-बूझ रखने वाला हर शख़्स़ इस मसले से पूरी त़रह़ वाकिफ़ हो सके। दोनों क़िस्म की दलीलें पेश करने के बाद यह कहा जा सकता है कि हिजरत का हुक्म अब भी बाक़ी है।

उ़लमा की एक बड़ी ता'दाद ने उन लोगों को दलीलों के साथ जवाब दे दिया है जो किसी भी सूरत में हिजरत किये जाने के क़ायल नहीं है। आगे बयान की जा रही तहरीर से इंशाअल्लाह बात पूरी त़रह़ वाज़ेह (स्पष्ट) हो जाएगी कि ईमान की ह़िफ़ाज़त के लिये हिजरत किया जाना क़यामत तक ज़रूरी है।

*****

Scanned by CamScanner

मुहाजिर के चार ह़ालात और उनका हुक्म

01. दारुल कुफ़्र में अपने ईमान का इज़हार न कर सकता हो, लेकिन हिजरत उसके लिये मुमकिन हो.

जो शख़्स ऐसे मुल्क, राज्य, शहर या इलाक़े में रहता हो जहाँ कुफ़्र का ग़लबा (वर्चस्व) हो और उस शख़्स के लिये ईमान व इस्लाम के खुले त़ौर पर इज़हार करके रहना मुमकिन न हो, लेकिन अगर वो उस इलाक़े को छोड़कर कहीं दूसरी जगह जाना चाहे तो उस पर कोई रोक-टोक न हो तो ऐसी ह़ालत में हिजरत करना वाजिब है।

इन ह़ालात में अगर कोई शख़्स हिजरत नहीं करेगा तो उसके लिये अल्लाह तआला की त़रफ़ से सख़्ततरीन चेतावनी दी गई है और नबी करीम (ﷺ) ने उससे बराअत (अलग होने) का ए'लान किया है। यहाँ तक कि अगर किसी औ़रत को दारुल कुफ़्र में ईमान के इज़हार की इजाज़त न हो और उसके हिजरत करने में कोई रूकावट न हो तो उस पर भी हिजरत करना वाजिब है। अहले इ़ल्म ने ऐसी परिस्थिति में औ़रत को बग़ैर मह़रम के सफ़र करने की भी इजाज़त रखी है। इससे हिजरत की अहमियत का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है। फ़र्माने बारी तआला है,

'जिन लोगों ने अपनी जानों पर ज़ुल्म किया, फ़रिश्ते जब उनकी रूह क़ब्ज़ करते हैं तो पूछते हैं कि तुम ज़मीन में किस ह़ाल में थे? वो कहेंगे कि हम ज़मीन में कमज़ोर समझे जाते थे। फ़रिश्ते कहेंगे कि क्या अल्लाह की ज़मीन फैली हुई नहीं थी जहाँ तुम हिजरत कर जाते? उन लोगों का ठिकाना जहन्नम है, वो बहुत बुरी जगह है।'

(सूरह निसा : 97)

इस आयत में हिजरत की त़ाक़त रखने के बावजूद हिजरत न करने वालों के लिये बहुत सख़्त चेतावनी दी गई है। एक ह़दीष़, जिसमें आप (ﷺ) ने फ़र्माया,

Scanned by CamScanner

'मैं हर उस मुसलमान से बेज़ार हूँ जो मुश्रिकों के बीच रहता हो। ये दोनों एक-साथ नहीं रह सकते।' (तिर्मिज़ी : 4/155 स़ह़ीह़)

'हिजरत ख़त्म न होगी, जब तक कि दुश्मन से जंग जारी हो।'
(मुस्नद अह़मद : 1/192)

जिस शख़्स़ को दारुल कुफ़्र में ईमान का ख़त़रा हो, वो लाज़मी (अनिवार्य) त़ौर पर हिजरत करेगा। इमाम शाफ़िई (रह़.) फ़र्माते हैं कि अल्लाह के रसूल (ﷺ) ने उस शख़्स़ पर हिजरत फ़र्ज़ क़रार दी है जिसे अपने दीन का अन्देशा हो और जिसे हिजरत करने की त़ाक़त हो।

02. दारुल कुफ़्र में अपने ईमान का इज़हार न कर सकता हो, और हिजरत करना उसके लिये मुमकिन न हो.

जो लोग हिजरत की त़ाक़त नहीं रखते उनके लिये सूरह निसा की अगली आयत में छूट देते हुए कहा गया है,

'सिवाय उन कमज़ोर मर्दों, औ़रतों और बच्चों के जो किसी क़िस्म के ह़ीले की त़ाक़त नहीं रखते और न ही उन्हें कोई रास्ता नज़र आता हो।' (सूरह निसा : 98)

या'नी जो मर्द, औ़रत व बच्चे दारुल कुफ़्र में दबी-कुचली ह़ालत में, ईमान को छुपाकर जीने पर मजबूर हों और जो हिजरत करने की इस्तिताअ़त (सामर्थ्य) नहीं रखते हों, उनके साथ अल्लाह तआ़ला रह़म का बर्ताव करेगा।

इस्तिताअ़त न रखने का मत़लब यह है कि या तो मरीज़ हों, या दारुल कुफ़्र में रहने के लिये उन्हें मजबूर किया जाता हो, औ़रतें व बच्चे चूँकि कमज़ोर होते हैं और उनको दारुस्सलाम का रास्ता मा'लूम न हो या रास्ते में सताए जाने का ख़त़रा हो। इस ह़ालत में उन पर हिजरत करना वाजिब नहीं।

इमाम शाफ़िई (रह़.) **'अहकामुल क़ुर्आन'** में फ़र्माते हैं कि अल्लाह तआ़ला ने हिजरत की त़ाक़त न रखने वालों की मजबूरी को क़ुबूल कर लिया है। फ़़मानें बारी तआ़ला है,

'जिसने ईमान लाने के बाद कुफ़्र किया लेकिन उसका दिल ईमान पर मुतमईन था। अलबत्ता जिसने जानते-बूझते कुफ़्र किया तो उन

Scanned by CamScanner

पर अल्लाह का ग़ज़ब है और उनके लिये बड़ा अ़ज़ाब है।'

(सूरह नहल : 106)

उस इन्सान पर हिजरत फ़र्ज़ है जिसे अपने दीन में फ़ित्ने का ख़ौफ़ हो और वो हिजरत की ताक़त भी रखता हो। इमाम इब्ने तैमिया का फ़तवा है,

अगर किसी मोमिन को अपने दीन और ईमान के बारे में ख़ौफ़ हो तो उसे हिजरत करने में देरी नहीं करनी चाहिये।

अगर किसी को अपने दीन में ख़ौफ़ न हो तो वो दारुल कुफ़्र में रह सकता है।

03. दारुल कुफ़्र में अपने ईमान का इज़्हार कर सकता हो, और चाहत के बावजूद हिजरत करना मुमकिन न हो.

ऐसी हालत में जब किसी इन्सान के लिये दारुल कुफ़्र में दीन के इज़्हार की ताक़त तो हो लेकिन उसे वो इलाक़ा छोड़कर जाने से रोका जाता हो तो उस पर हिजरत करना वाजिब नहीं। उस शख़्स को उस इलाक़े में रहना जाइज़ है लेकिन बेहतर यही है कि जब भीकभी उसके लिये हिजरत करना आसान हो, वो दारुस्सलाम की तरफ़ हिजरत कर जाए।

04. दारुल कुफ़्र में अपने ईमान का इज़्हार कर सकता हो, और हिजरत करना भी मुमकिन हो.

इस परिस्थिति के बारे में उ़लमा के बीच बहुत सारा इख़्तिलाफ़ है बल्कि यूँ कहा जा सकता है कि सारा इख़्तिलाफ़ ही इसमें इकट्ठा हो गया है। कुछ उ़लमा की राय में ऐसी सूरतेहाल में हिजरत करना जाइज़ नहीं है।

शाफ़िई उ़लमा ने उस सूरत में हिजरत करना हराम क़रार दिया है जब अल्लाह की इबादत में कोई रूकावट न हो और दीन की दा'वत देने की आज़ादी हो।

लेकिन कुछ उ़लमा ऐसी सूरतेहाल में भी हिजरत करने को वाजिब कहते हैं। किसी नतीजे पर पहुँचने से पहले हमें इस पहलू पर भी विचार करना चाहिये कि हिजरत की कई सूरतें होती हैं। जैसे,

(1). दारुल कुफ़्र से दारुस्सलाम की ओर,

(2) बिदअ़त के मुल्क, शहर या इलाक़े से सुन्नत के मुल्क, शहर

Scanned by CamScanner

या इलाक़े की ओर,

(3) फ़िस्क़ (नाफ़र्मानी) के मुल्क, शहर या इलाक़े से नेकी वाले मुल्क, शहर या इलाक़े की ओर,

(4). उस मुल्क, शहर या इलाक़े से जहाँ इस्लाम के कुछ अहकाम लागू हों से उस मुल्क, शहर या इलाक़े की ओर जहाँ मुकम्मल शरीअ़त लागू हो।

इन परिस्थितियों में हिजरत के अहकाम भी अलग-अलग हो जाते हैं।

कुछ नामनिहाद इस्लामी मुल्कों के बारे में यह सवाल उठता है कि उनको दारुस्सलाम कहा जाएगा या दारुल कुफ़्र?

मिष़ाल के तौर पर कुछ देश हैं जहाँ की सारी जनता मुसलमान है। मस्जिदें नमाज़ियों से भरी हुई हैं, जुम्अ़ा और ईदैन की नमाज़ों में बहुत सारे लोग जमा होते हैं। अज़ानों की आवाज़ें वातावरण में गूँजती रहती हैं। लेकिन उन देशों के हुक्मराँ अपने बनाए हुए क़ानूनों के तहत हुकूमत करते हैं; अदालतें इन्सानों के बनाए हुए क़ानूनों पर चलती है, शिक्षा व्यवस्था मॉडर्न सिस्टम पर आधारित है, मुसलमानों के ख़िलाफ़ काफ़िरों की मदद की जाती है। दीन के इज़हार की मुकम्मल आज़ादी नहीं है। क्या ऐसे देश को इस्लामी देश कहा जा सकता है?

इमाम इब्ने तैमिया (रह.) की नज़र में ऐसे देश 'दारुल मुरक्कबः' हैं, जो कि दीन से बाहर निकल चुके हैं।

लफ़्ज़ी इख़्तिलाफ़ को अगर एक तरफ़ रख दिया जाए कि ये दारुल कुफ़्र हैं या दारुल मुरक्कबः, ऐसे देशों से हिजरत करना बेहतर है, अगर मुकम्मल शरीअ़त पर आधारित मुल्क में जाना मुमकिन हो।

*****

Scanned by CamScanner

मिश्रित संस्कृति वाले देशों से हिजरत

आज के दौर में बहुत से देश ऐसे हैं जहाँ किसी धर्म-विशेष की हुकूमत नहीं है और वहाँ मुसलमानों की ता'दाद कम है, या'नी वे वहाँ अल्पसंख्यक हैं। ये देश ख़ुद को धर्मनिरपेक्ष कहते हैं, जिनमें हमारा देश भारत भी शामिल है। इन देशों में मुसलमानों को अपने दीन के इज़हार, अमल और प्रचार-प्रसार की मुकम्मल आज़ादी है। ऐसे मुल्कों के बारे में शाफ़िई उलमा कहते हैं कि जो शख़्स दारुल कुफ़्र में अपने दीन का इज़हार कर सकता हो और किसी अलग जगह पर रह सकता हो, कुफ़्र से महफ़ूज़ हो तो उस पर उस इलाक़े से हिजरत करना हराम है। ऐसा इसलिये कि उसका वो अलग मक़ाम ही उसके लिये दारुस्सलाम है अगर उसने हिजरत कर ली तो पूरा इलाक़ा दारुल कुफ़्र बन जाएगा।

इमाम शाफ़िई की राय के मुताबिक़ हर वो मक़ाम, जहाँ एक मुसलमान कुफ़्र से महफ़ूज़ (सुरक्षित) हो, दारुस्सलाम है। (या'नी मुमकिन है कि उसके वहाँ रहने से उस इलाक़े में इस्लाम फैल जाए और अगर ये भी चला गया तो इस्लाम वहाँ से बिल्कुल ही ख़त्म हो जाएगा, बल्कि आइन्दा भी उसकी सम्भावना नहीं रहेगी।

शाफ़िइयों की यह दलील मशहूर शाफ़िई आलिम शहाबुद्दीन दैलमी के फ़तवे पर आधारित है। उनसे उन्दुलुस (स्पेन) के मुसलमानों के बारे में एक सवाल किया गया था, जो कुछ इस तरह से था,

'उन मुसलमानों के बारे में क्या हुक्म है जो उन्दुलुस के उन इलाक़ों में रहते हैं जिनको अरग़ौन कहा जाता है। वो ईसाई हुक्मरान के मातहत रहते हैं और हुकूमत को टेक्स देते हैं जो सभी नागरिकों पर लागू है। वो हुक्मराँ उन पर टेक्स के अलावा और कोई ज़ुल्म नहीं करता, माली व जानी नुक़्सान नहीं पहुँचाता। उनको मस्जिदों में

Scanned by CamScanner

नमाज़ पढ़ने, ज़कात और सदक़ा देने की इजाज़त है। शरीअत पर खुलेआम अमल कर सकते हैं, ईसाई उनको कुछ नहीं कहते। उनके दीनी मामलात में कुछ भी मुदाख़लत (हस्तक्षेप) नहीं करते।'

इस सवाल के जवाब में कहा गया कि उन मुसलमानों पर हिजरत वाजिब नहीं। इसलिये कि ये अपने मुल्क में दीन के इज़हार की ताक़त रखते हैं। ये मुसलमान भी अगर वहाँ से हिजरत करेंगे तो वो इलाक़ा पूरी तरह से दारुल हरब बन जाएगा। और जैसा कि सवाल में बताया गया है कि उनको अपने इस्लाम के इज़हार की इजाज़त है, काफ़िर उन पर कोई ए'तिराज़ नहीं करते और इतने अर्से से वो लोग इस तरह रह रहे हैं तो इस बात की सम्भावना नहीं है कि उनको मुर्तद होने पर मजबूर किया जाएगा। दीन महफ़ूज़ न रहने का इम्कान हो तो फिर उस जगह से हिजरत की जा सकती है।

लिहाज़ा जिन देशों में मुसलमान पूरी ईमानी आज़ादी के साथ जी सकते हों वहाँ से हिजरत करने की उन्हें कोई ज़रूरत नहीं है। अगर ईमान को ख़तरा हो तो फिर हिजरत करना वाजिब होगा।

इब्ने कुदामा अपनी किताब **'अल मुग़नी'** में लिखते हैं,

हिजरत किसके लिये वाजिब है और किसके लिये मुस्तहब? एक शख़्स हिजरत करने की ताक़त रखता है लेकिन वहाँ रहकर दीन के इज़हार की इस्तिताअत (सामर्थ्य) भी रखता है। उसके लिये हिजरत मुस्तहब (बेहतर) है ताकि कुफ़्फ़ार से जिहाद कर सके। मुसलमानों की मदद हो और ता'दाद बढ़े। मुश्रिकीन के साथ रहकर नाफ़र्मानी वाले काम देखने से बच सके। अलबत्ता हिजरत करना उसके लिये वाजिब (ज़रूरी) नहीं है, इसलिये कि वो हिजरत किये बग़ैर भी अपनी दीनी ज़िम्मेदारियों को पूरा कर सकता है और कर भी रहा है।

जैसा कि अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब (रज़ि.) मक्का में रहते थे। इसी तरह नुऐम बिन निहाम (रज़ि.) ने जब हिजरत का इरादा किया तो उनकी क़ौम बनू अदी उसके पास आई, उन्होंने कहा कि हमारे पास ही रहो, अपने दीन पर अमल करते रहो, जो भी तुम्हें तकलीफ़ देगा हम उससे तुम्हारी हिफ़ाज़त करेंगे और तुम अपने मामलात जारी रखो जो तुम हमारे फ़ायदे के लिये करते थे। वो यतीमों और बेवाओं की किफ़ालत (भरण-पोषण) का इंतज़ाम किया करता था। उसने काफ़ी अर्से तक हिजरत नहीं की। फिर

Scanned by CamScanner

कुछ मुद्दत बाद वो हिजरत करके आप (ﷺ) की ख़िदमत में मदीना पहुँचा तो आप (ﷺ) ने कहा, तेरी क़ौम बेहतर थी, बनिस्बत मेरी क़ौम के। मेरी क़ौम ने मुझे निकाला और मेरे क़त्ल का इरादा किया जबकि तेरी क़ौम ने तेरी हिफ़ाज़त की। उसने कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल (ﷺ)! आपकी क़ौम ने आपको अल्लाह की इताअत और उसके दुश्मन से जिहाद की तरफ़ निकाला जबकि मेरी क़ौम ने मुझे हिजरत और अल्लाह की इताअत से रोक रखा था। (अल असाबा फ़ी तमीज़ुस्सहाबा)

इब्नुल अरबी ने **'अहकामुल क़ुर्आन'** में लिखा है कि मैंने अपने शैख़ अबू बक्र अल फ़हरी से कहा कि मैं अपने इलाक़े मिस्र को छोड़कर आपके इलाक़े में आ जाऊँ? तो शैख़ ने कहा कि मैं नहीं चाहता कि तुम ऐसे इलाक़े में आ जाओ जहाँ जहालत ग़ालिब हो, अक़्ल कम हो। तो मैंने कहा, आप मक्का की तरफ़ हिजरत कर जाएं, अल्लाह के घर के क़रीब रहें। मेरे ख़याल में इस मुल्क से निकलना आप पर फ़र्ज़ हो चुका है जहाँ बिदअत और हराम रिवाज जड़ें जमा चुके हैं। इस पर शैख़ ने कहा कि मेरी कोशिश से यहाँ बहुत से लोगों को हिदायत मिली है, बहुत से लोग तौहीद की तरफ़ आ गये हैं, बातिल अक़ीदों से रुजूअ करके अल्लाह के दीन की तरफ़ आए हैं।

मावर्दी कहते हैं,

'जब कुफ़्र वाले इलाक़े में कोई शख़्स अपने दीन का इज़हार कर सकता हो तो उसकी वजह से वो दारुस्सलाम बन जाता है। वहाँ रहना उसके लिये हिजरत करने से बेहतर होता है क्योंकि इस बात की उम्मीद रहती है कि दूसरे लोग भी इस्लाम की तरफ़ आ जाएं।'

कलाम का ख़ुलासा (सारांश) यह है कि जिस इलाक़े में अनेक धर्म के लोग रहते हों, वहाँ मुसलमानों का रहना उस सूरत में वाजिब है जब उनके दीनी मामलात में कोई रूकावट पेश नहीं की जाती हो। मुसलमानों के वहाँ रहने से इस्लाम के बारे में जानकारी आम होती हो और इस बात की सम्भावना हो कि थोड़ी कोशिश करने से लोग इस्लाम की तरफ़ माइल (आकर्षित) हो सकते हैं तो वहाँ रहना हिजरत करने से बेहतर है। लेकिन जो शख़्स इस्लाम की तब्लीग़ करने की क़ाबिलियत नहीं रखता और उसे इस बात का अन्देशा हो कि मिश्रित इलाक़े में रहने से उसके अक़ीदे गड्ड-मड्ड हो सकते हैं तो उसके लिये हिजरत करके ऐसी जगह चले जाना ही बेहतर होगा जहाँ रहकर उसका ईमान मज़बूत रहे और डांवाडोल न हो। *****

Scanned by CamScanner

हिजरत के बुनियादी उसूल

01. निय्यत में ख़ुलूस हो :

हिजरत करने वाले को चाहिये कि वो हिजरत में इख़्लासे-निय्यत से काम ले और ष़वाब की उम्मीद रखे। स़िर्फ़ दीन की मदद के लिये हिजरत करे, अपने दीन को फ़ित्नों से बचाने के लिये इलाक़ा या मुल्क छोड़े। कुर्आन मजीद में अल्लाह तआला इर्शाद फ़र्माता है,

'जिन लोगों ने ज़ुल्म की वजह से अल्लाह की राह में हिजरत की उनके लिये दुनिया में अच्छाई और आख़िरत का अज्र बहुत बड़ा है।'

(सूरह नहल : 41)

02. दुनियवी लालच न हो :

हिजरत करने वालों को यह नहीं सोचना चाहिये कि उन्हें भी इस दुनिया में वही सब-कुछ मिलेगा जो दूसरे लोगों को मिला है। इस निय्यत व इरादे से शहर या इलाक़ा न छोड़े कि दूसरे शहर में ज़िन्दगी अच्छी त़रह़ गुज़रेगी या'नी हिजरत का मक़सद ज़्यादा रिज़्क़ ह़ासिल करना नहीं हो। यह अलग बात है कि अगर कोई शख़्स़ अपने ईमान की ह़िफ़ाज़त के लिये हिजरत करे और दूसरे इलाक़े में उसकी रोज़ी में इज़ाफ़ा हो जाए।

'जो कोई अल्लाह की राह में हिजरत करे वो ज़मीन में रहने की बहुत सी जगह और (रिज़्क़ में) फैलाव पाएगा।' (सूरह निसा : 100)

03. अच्छी त़रह तह़क़ीक़ करे :

हिजरत के त़लबगार को चाहिये कि वो दारुल कुफ़्र, दारुल ह़रब के बारे में तह़क़ीक़ (खोजबीन) करे। स़िर्फ़ अपने मन के क़यास (अनुमान) के आधार

Scanned by CamScanner

पर किसी गाँव, शहर या देश को दारुल हरब न समझे। अगर कोई शख़्स दीन का जानकार हो और वो अपने क़ौल व अमल (वचन व कर्म) से इस्लाम की तब्लीग़ करता हो, और इस काम से उसकी बस्ती के लोग रोकते हों और तकलीफ़ पहुँचाते हों और उसमें प्रतिरोध करने की ताक़त न हो तो उस शख़्स पर हिजरत करना वाजिब है।

04. आलिमे-दीन की ज़िम्मेदारी :

आलिम की जो ज़िम्मेदारी है वो आम आदमी की नहीं है। अगर कोई आलिम किसी ऐसे इलाक़े में रहता हो जहाँ ज़्यादा ता'दाद सरकशों और नाफ़र्मानों की हो, तो वो आलिम उस बस्ती में दीन की दा'वत देने की नियत से रह सकता है। अगर दीन का जानकार शख़्स बुराइयों को रोकने की कोशिश न करे तो यह उसके लिये अज़ाब का सबब है। अल्लाह के रसूल (ﷺ) का इर्शाद है,

'तुम ज़रूर भली बातों का हुक्म दो, बुराइयों से रोको और ज़ालिम का हाथ पकड़कर उसको हक़ की तरफ़ मोड़ दो वर्ना अल्लाह तुम पर एक-दूसरे का दिल मार देगा। फिर तुम पर भी वैसी ही ला'नत पड़ेगी, जैसी बनी इस्राईल पर पड़ी थी।' (अबू दाऊद)

लेकिन जहाँ खुलेआम बुराइयाँ हो रही हो वहाँ आम आदमी का रहना उसके दीन में फ़ित्ने का कारण बनेगा, इसलिये उसे हिजरत कर लेनी चाहिये।

05. जब हिजरत करना ज़्यादा फ़ायदेमन्द हो :

जो शख़्स किसी शहर या इलाक़े में अपने दीन का खुले तौर पर इज़हार कर सकता हो और उसके लिये हिजरत करना भी मुमकिन हो; तो उसका हिजरत करना उस सूरत में मुस्तहब होगा जब उसका हिजरत करना मुसलमानों की मदद, दीन के ग़लबे और कुफ़्फ़ार की रुस्वाई का सबब हो।

06. बेहतर जगह की ओर हिजरत करें :

मुसलमानों को चाहिये कि वो हिजरत करके जिस जगह पर जाएं वो पहले वाली जगह से बेहतर हो। या'नी उस जगह पर उसके लिये अल्लाह के अहकाम की पैरवी करना ज़्यादा बेहतर तरीक़े से मुमकिन हो। ज़ुल्म वाले इलाक़े से इन्साफ़ वाले इलाक़े की तरफ़, नाफ़र्मानी के इलाक़े से फ़र्माबरदारी के इलाक़े की तरफ़ हिजरत की जा सकती है। जिस जगह पर ज़ुल्म, ज़िना और बेहयाई ज़्यादा हो

Scanned by CamScanner

वहाँ से ऐसी जगह पर हिजरत करनी चाहिये जहाँ ये चीज़ें नहीं हो, या खुले तौर पर नहीं हो।

07. बिला उज्र हिजरत वाली जगह से वापस न लौटे :

पूरी तह्क़ीक़ के बाद जिस जगह पर हिजरत की गई हो वहाँ से बिना किसी शरई उज्र (कारण) से वापस पहले वाली जगह पर लौटना कबीरा गुनाह है। तबरानी में हज़रत जाबिर (रज़ि.) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (ﷺ) ने फ़र्माया,

'उस शख़्स पर अल्लाह की ला'नत है जो हिजरत के बाद वापस हुआ।'

सुनन बैहक़ी कुबरा में मसरूक़ (रह़.) अ़ब्दुल्लाह (रज़ि.) से रिवायत करते है, **'अल्लाह ने ला'नत की है सूद खाने वाले, खिलाने वाले और गवाह बनने वाले पर जबकि उन्हें मा'लूम हो। गोदने वाली, गुदवाने वाली पर, ज़कात में टाल-मटोल करने वाले पर, आ'राबी बनकर हिजरत से वापस लौटने वाले पर। ये सब नबी करीम (ﷺ) की ज़बानी मलऊन हैं।'** (बैहक़ी)

हिजरत न करने से क्या होता है?

त़ाक़त रखने और मौक़ा उपलब्ध होने के बावजूद हिजरत न करने से बड़े-बड़े नुक़्सान सामने आते हैं। जैसे,

- मुन्किरात (नाफ़र्मानी वाले कामों) को देखना पड़ता है।
- नाफ़र्मानी और बुराइयाँ करने वाले लोगों के साथ रहना पड़ता है।
- उनसे दोस्ती करने की मजबूरी होती है।
- उनके साथ अच्छे अख़लाक़ से पेश आना पड़ता है।
- उनकी वजह से अच्छा-भला इन्सान भी बुराइयों की त़रफ़ जा सकता है क्योंकि बुराइयों में लिप्त लोग अपनी संगत में ऐसे ही लोगों को पसन्द करते हैं जो उनके जैसा हो। लिहाज़ा उनके साथ रहने से उनके नाजाइज़ कामों को भी जाइज़ व ग़लत़ कामों को भी स़ह़ीह़ कहना पड़ेगा।

इसलिये अगर कोई इन्सान हिजरत कर ले तो उसे इन तमाम बुराइयों से नजात (मुक्ति) मिल जाती है।

*****

Scanned by CamScanner

निष्कर्ष (Conclusion)

❊ दारुस्सलाम वो है जहाँ इस्लामी अहकाम बिना किसी मिलावट के लागू हों।

❊ दारुल कुफ़्र वो है जहाँ ग़ैर-इस्लामी क़ानून लागू हों और वो इस्लामी अहकाम पर हावी हों।

❊ दारुल मुरक्कबः वो है जहाँ की हुकूमत अगरचे मुसलमान हो लेकिन वहाँ इस्लामी अहकाम लागू न हो। मुसलमानों को इस्लाम के इज़हार के मामले में रूकावट न हो लेकिन हुकूमत में इस्लाम के उन्हीं अहकामात को लागू करते हैं जिनसे उनकी राजनीति और सत्ता को ख़तरा न हो। इसी तरह वो इलाक़ा भी दारुल मुरक्कबः है जहाँ मुसलमानों और ग़ैर-मुस्लिमों की मिली-जुली आबादी हो, दोनों ही क़ौमें अपने-अपने दीन के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारती हों और वहाँ मुसलमानों पर इस्लाम के इज़हार करने की पाबन्दी न हो।

❊ हिजरत का हुक्म आज भी बाक़ी है। यह हुक्म हर उस शख़्स के लिये है जो किसी इलाक़े में अपने दीन के मामले में रूकावट या परेशानी झेल रहा हो। अगर कोई शख़्स ऐसी जगह पर रहता है जहाँ नाफ़र्मानी वाले काम खुलेआम हो रहे हों और वहाँ रहने से उस आदमी को बज़ाते-ख़ुद या उसके परिवार के सदस्यों के बिगड़ जाने या गुमराह होने का ख़तरा हो तो उसे उस जगह से हिजरत कर लेनी चाहिये।

❊ हिजरत करने की इस्तिताअत (सामर्थ्य) रखने और हिजरत करने के मामले में रूकावट न होने के बावजूद अगर कोई शख़्स दुनियवी कारणों से हिजरत न करे तो वो गुनाहगार होगा।

❊ हिजरत करने से मुसलमान अपनी बहुलता वाली बस्तियों में रहने का मौक़ा पाता है जिससे न सिर्फ़ उसका ईमान मज़बूत होता है बल्कि उसका आत्मविश्वास भी बढ़ता है। तमाम मुसलमान उसके सुख-दुःख में आसानी से शरीक हो सकते हैं।

Scanned by CamScanner

हिजरत

कुर्आन मजीद में अल्लाह तआला इर्शाद फ़र्माता है,

'जिन लोगों ने ज़ुल्म की वजह से अल्लाह की राह में हिजरत, उनके लिए दुनिया में अच्छाई और आख़िरत का अज्र बहुत बड़ा है.'

(सूरह नहल : 41)

'जो कोई अल्लाह की राह में हिजरत करे वह ज़मीन रहने की बहुत सी जगह और (रिज़्क में) फैलाव पाएगा.' (सूरह निसा : 100)

हिजरत की इस्लाम में बहुत ज़्यादा अहमियत है. अल्लाह की राह में हिजरत करने का मतलब है, अपना इलाक़ा छोड़कर किसी ऐसी जगह मुंतक़िल (ट्रांसफर) हो जाना जहाँ एक मुस्लिम का दीन-ईमान, जान-माल व इज़्ज़त-आबरू महफ़ूज़ (सुरक्षित) हो. प्रस्तुत किताब में हिजरत के बारे में ठोस एवं तर्कसंगत जानकारी उपलब्ध कराई गई है.

99285 92786
98293 46786
98876 48000

आदर्श मुस्लिम पब्लिकेशन
30 स्टेडियम शॉपिंग सेण्टर, जोधपुर-6
www.publication.adarshmuslim.com

Hijrat
7465787565822
₹30.00

Scanned by CamScanner